Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.gisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2024 GISRRJ | Volume 7 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

अष्टांग योग के यम और नियम के पालन का मानव जीवन पर प्रभाव

नागरमल
व्याख्याता हिंदी, श्री वीर तेजा उच्च माध्यमिक विद्यालय सुनारी नागौर ;राजस्थान

Article Info
Article History
Accepted : 20 May 2024
Published : 30 May 2024
Publication Issue :
Volume 7, Issue 3
May-June-2024
Page Number : 18-22

सारांश

आज मानव इस मशीनी युग में सभी स्वास्थ्य सुविधाएं होते हुए भी शारीरिक, मानसिक व बौद्धिक रूप से स्वास्थ्य को लेकर चिंतित है। हम स्वास्थ्य की पूरी जानकारी रखते हुए भी स्वस्थ नहीं है। प्राचीन काल से लेकर अब तक स्वास्थ्य संस्कृति पर बहुत सारे शास्त्रकारों, रचनाकारों, साहित्यकारों, लेखकों ने अपने–अपने अनुभव का बखान किया है। इस संदर्भ में महर्षि पतंजलि का "पतंजल योगस ूत्र" अपने में अद्वितीय है। जिसमें महर्षि पतंजलि ने मानसिक क्लेशों (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश) का निवारण के लिए योग सूत्रों का वर्णन किया। वही मन को संयमित और एक सदाचारी, नैतिक जीवन जीने के लिए अष्टांग योग में यम और नियम जैसे मुख्य अंगा ें का भी वर्णन किया है। जिसका अनुसरण कर व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, बा ैद्धिक अवस्थाओं से ऊपर उठकर राजयोग अर्थात जीवन मे ं अध्यात्म की उच्च अवस्था (मोक्ष) को प्राप्त कर सकता है।

मूल शब्दः अष्टांग योग, यम और नियम, स्वास्थ्य, मानव जीवन, नैतिकता, सदाचार

यम और नियम अष्टांग योग के सबस ें महत्वपूर्ण अ ंग है। यम नियम की उत्पत्ति बहुत प्रसिद्ध पाठ श्पतंजलि योग सूत्रश से हुई है, महर्षि पतंजलि को एक ऋषि के रूप में जाना जाता है, जिन्ह ें अष्टांग योग या पतंजलि योगसूत्र का जनक कहा जाता है। महर्षि पतंजलि ने योग के आठ अंगों में सबस ें प्रथम स्थान पर यम और नियम को रखा है। इसे योग का स्वास्थ्य की दृष्टि से प्रथम स्थान माना जाता है। यम–नियम दोनों असाधारण सिद्धिया ं हैं। महर्षि पतंजलि के अनुसार यम–नियम की साधना से जीवन का विकास व आत्मा का विकास होता है तथा इसस ें अष्ट सिद्धियां और योग की उच्च अवस्था की प्राप्ति की जा सकती ह ै और जिसके कारण जीवन सब प्रकार की सुख शांति से परिपूण ं हो सकता है। यम–नियम के माध्यम से व्यक्ति शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक अवस्थाओं से ऊपर उठकर योग में उच्च साधना की अवस्था को प्राप्त करता है। योग में यम और नियम की बहुत महत्वपूर्णता बताई गई हैं, इसका पालन किए बिना व्यक्ति योगी नही बन सकता हैं। यम और नियम को राज योग साधना के प्रारंभिक और महत्वपूण ं अंग माना जाता है। जिसका पालन किए बिना राज योग की उच्च साधना की प्राप्ति असंभव है। यम और नियम, आठ पटला ें (अष्टांग योग) में पहले दो पटलों को कहा जाता है, जिनमें यम पंच और नियम पंच होते हैं।

अष्टांग योग

संस्कृत में श्अष्ट+अंगष अष्टांग है। श्अष्टष का अर्थ है आठ और श्अंगष भाग है इसलिए इसका अर्थ है आठ अंग या पथ, अष्टांग योग पतंजलि के योग दर्शन पर आधारित है। पतंजलि मानते ह ैं कि समस्त दुःखो से मुक्ति पाने के लिए एवं द्रष्टा को उसक ें वास्तविक स्वरूप में जानने अथवा साक्षात्कार करने में योग आवश्यक है। सभी क्लेशों के मूल में श्अविद्याष है जिसका निवारण चित्तवृत्तियो ं के निरोध अर्थात नियंत्रण द्वारा ही संभव ह ै और चित्त की अज्ञान रूपी

Copyright © 2024 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)**

प्रवाह को रोककर ज्ञान रूपी प्रवाह की ओर ले जाना योग है और इसके लिए उन्होंने अष्टांग योग का वर्णन किया है।

यमनि यमासन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाध योष्टा वङ्गानि।। – पातंजल योगदर्शन 2/29 अर्थात् 1) यम 2) नियम 3) आसन 4) प्राणायाम 5) प्रत्याहार 6) धारणा 7) ध्यान तथा 8) समाधि। ये योग के आठ अ ंग कहे गए हैं। यम का स्वरूप यम का अर्थ– यम शब्द "यमु बंधने धातु मे, घञ प्रत्यय लगाने पर निष्पन होता है जिसका अर्थ है– बाँधने वाला या नियंत्रित करने वाला। योग में यम का अर्थ है नियंत्रित करना, इंद्रियो ं व मन पर नियंत्रण करना ही यम कहा जाता है। यम के माध्यम से व्यक्ति इंद्रियों एवम मन को हिंसा जैसे अशुभ विचारो से हटाकर आत्मकेंद्रित करता है। यम को पांच भागों में बांटा गया है। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। जिन्हे ं सामाजिक नैतिकता भी कहा जाता है। टहि ंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्या परग्रहाः यमा। पात ंजलयोग दर्शन 2/30।।

1. अहिंसा

मन, वचन एवं कर्म से किसी भी प्राणी के प्रति वैरभाव नहीं रखना अहि ंसा कहलाता ह ै। यह अहिंसा भाव रूप में भी होनी चाहिए और क्रिया में भी। ऐसा न हो कि भाव तो अहिंसा का रखते हैं लेकिन क्रिया रूप में हिंसा हो रही है अतः भाव आ ैर क्रिया रूप से किसी भी प्राणी को (मनुष्य, पशु, पक्षी या अन्य कीट पतंग आदि) को मन, वाणी तथा कर्म से किसी भी प्रकार के कष्ट नही ं देना। अन्य शब्दों में कहा जाए तो शब्दों से, विचारों से और कर्मों से किसी को अकारण हानि नहीं पहुँचाना अहिंसा कहलाता है।

अहि ंसा का फल अहिंसा प्रतिष्ठाया ं तत्सन्निधौ वैरत्याग।। पातंजलयोगदर्शन 2/35।। अर्थात् अहिंसा के प्रतिष्ठित हो जाने पर उस योगी के पास वैरभाव छूट जाता है ।

2. सत्य

किसी भी वस्तु, व्यक्ति या स्थान के विषय में हम जो कुछ या जैसा भी जानते, समझते और मानते और सुनते हैं उसे वाणी से उसी रूप व्यक्त करना ही सत्य कहलाता ह ै तथा वह सत्य जो प्रिय तथा हितकर भी हो और जिसस ं किसी भी प्राणी मात्र का ं ठेस (दुख) न पहुंचे।

सत्य का फल

सत्यप्रतिष्ठाया ं क्रियाफ ंलाश्रययत्वम ्। पातंजलयोगदर्शन 2/36।। अर्थात् सत्य से प्रतिष्ठित (वितर्क शून्यता स्थिर) हो जाने पर उस साधक में क्रियाओं और उनके फलों की आश्रयता आ जाती ह ै और जिसस ं उसकी वाणी में संयम हो जाता है, वह जो कुछ भी बोले वह सत्य हो जाता है अर्थात् जब साधक सत्य की साधना में प्रतिष्ठित हो जाता है तब उसके किए गए कर्म उत्तम फल देने वाले होते हैं और इस सत्य आचरण का प्रभाव अन्य प्राणियों पर कल्याणकारी होता है।

3. अस्तेय

सामान्य शब्दों में कहें तो चोर–प्रवृति का न होना या चोरी नहीं करने का भाव अस्तेय कहलाता है। सांसारिक व्यवस्था के अंतर्गत सभी संसाधनों का स्वामित्व किसी न किसी के पास होता ही ह ै अतः बिना स्वामी से पूछे किसी भी वस्तु को न लेना अस्तेय कहलाता है। अर्थात् मन, वचन और कर्म स ं किसी दुसरे की वस्तु को अपना न मानना अस्तेय कहलाता है।

अस्तेय का फल

अस्तेयप्रतिष्ठाया ं सर्वरत्नोपस्थानम्।। पातंजलयोगदर्शन 2/3।। अर्थात् अस्तेय के प्रतिष्ठित हो जाने पर सभी रत्नों की उपस्थति हो जाती है।

4. ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य का अर्थ है ब्रह्म जैसी चर्या में अपने जीवन को पालना। भाव रूप में स्वयं को ब्रह्म की दिनचर्या के लिए तैयार करना और क्रिया रूप में विधि और निषेध की साधना से ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। अपनी जीवनी एवं सृजनात्मक शक्ति वीर्य का रक्षण करना, ईश्वर की आराधना, स्तुति करना एवं सम्बन्धो की शुचिता रखना ब्रह्मचर्य है। अन्य शब्दों में कहा जाए तो चेतना को ब्रह्म के ज्ञान में स्थिर करना तथा सभी इन्द्रिय जनित सुखों में संयम बरतना ब्रह्मचय ं कहलाता है।

ब्रह्मचर्य का फल ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीय ंलाभ।। पातंजलयोगदश ंन 2/38 ।। अर्थात् ब्रह्मचर्य के प्रतिष्ठित हो जाने पर वीर्य (सामर्थ्य) का लाभ होता है।

5. अपरिग्रह

जीवन निर्वाह के मध्य विभिन्न संसाधनों का उपयोग एवं प्रयोग स्वाभाविक है और जितने की आवश्यकता से मनुष्य का जीवन निर्वहन हो सके, उसस ं अधिक संसाधनों के संग्रह की प्रवृत्ति नही ं करना यही अपरिग्रह है। अन्य शब्दों में कहा जाए तो अपरिग्रह का अर्थ आवश्यकता से अधिक संचय नहीं करना और दूसरों की वस्तुओं की इच्छा नहीं करना अपरिग्रह है।

अपरिग्रह का फल अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्तासंबोध।। पात ंजलयोगदर्शन 2/39।।

अर्थात् अपरिग्रह स्थिर होने पर (भूत, वर्तमान और भविष्य के) जन्मों तथा उनके प्रकार का स ंज्ञान होता है ।

उपरोक्त सभी यमों को महर्षि पतंजलि सार्वभौम महाव्रत मानते हैं जिनका पालन किसी विशिष्ट व्यक्ति, जाति, काल अथवा परिस्थितियों में अनुष्ठेय नही है बल्कि जिसका अनुपालन प्रत्येक जाति, प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक काल एवं प्रत्येक परिस्थितियों में अनुष्ठेय है। इसलिए इसे महर्षि पतंजलि ने "सार्वभौम महाव्रत'' की संज्ञा दी है।

नियम का स्वरूप

आष्टा ंग योग के नियम पाँच होते है ं, जो निम्नलिखित हैं शौचसंतोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमा– ।। पातंजलयोगदर्शन 2/32 ।।

शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्राणिधान – नियम कह ं जाते हैं। जिन्हें व्यक्तिगत नैतिकता भी कहा जाता है।

1. **शौच**

   इसका मतलब है पवित्रता, अहिंसा की तरह यह पवित्रता भी शारीरिक और मानसिक है। शारीरिक पवित्रता को पुनः दो भागों में विभाजित किया गया है, बाहरी और आंतरिक। शारीरिक शुद्धता यदि नहीं होगी तो मन भी अशांत एवं मलिन महस ूस करेगा और यदि मानसिक शुद्धता (वैचारिक शुद्धता) नहीं होगी तो उसका असर शरीर पर भी पड़ेगा। आधुनिक विज्ञान में कहा जाता है कि अधिकतर बीमारियाँ सायको–सोमेटिक हैं तथा वशिष्ठ संहिता में भी जिसे मनोदैहिक रोगो ं की संज्ञा दी गयी है अर्थात मन से शरीर की ओर या शरीर से मन की ओर आने वाले विकृतियां या रोग। शारीरिक शुद्धता – नित्य स्नान कर शरीर की शुद्धि करने का ं बाह्य शौच कहते हैं। आन्तरिक शुद्धता – अपने भीतर के अंतःकरण की मलिनता को पवित्र विचारों एवं अहि ंसा आदि यमों के अनुष्ठान से दूर करना ही आंतरिक शुद्धता कहलाती है।

2. **संतोष**

   संतुष्ट और प्रसन्न रहना अर्थात् कर्तव्य का पालन करते हुए उसका जो कुछ परिणाम उपलब्ध हो एवं जो कुछ प्राप्त हो, उसी में संतुष्ट रहना, किसी प्रकार की तृष्णा न करना संतोष है। इस ं ऐस ं भी कहा जाता है – विषय वासना के परित्याग से तृष्णा रहित होने से उत्पन्न सुख संतोष है। कहा जाता है "संतोषं परम् सुखम" – संतोष स ं परम सुख का लाभ मिलता है।

3. **तप**
   तप का अर्थ होता है कि मन और शरीर को अनुशासित रखना – सुख–दुख, सर्दी–गर्मी, भूख–प्यास जैसे द्वंद्वों को सहन करते हुए मन व शरीर की साधना भी तप है या स्वयं से अनुशासित रहना अर्थात् अपने वर्ण, आश्रम परिस्थिति और योग्यता के अनुसार स्वधर्म का पालन करना और उसके पालन में जो शारीरिक या मानसिक अधिक से अधिक कष्ट प्राप्त हो उसे सहर्ष सहन करना अर्थात् स्वयं से अनुशासित रहना ष्तपष् कहलाता है।
4. **स्वाध्याय** आत्मचिंतन करना अर्थात् जिनसे अपने कर्तव्य–अकर्तव्य का बोध हो सके ऐसे वेद, शास्त्र, पुराण, लेख आदि का पठन–पाठन और अपने भगवान के नाम ओम आदि किसी नाम का या गायत्री मंत्र या इष्ट देव के मंत्र का जाप करना, आत्मचिंतन करना या शास्त्रों का अध्ययन करना आदि "स्वाध्याय" कहलाता है।
5. **ईश्वर** प्राणिधान ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण, पूर्ण श्रद्धा भाव होना अर्थात् ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण, पूर्ण श्रद्धा या ईश्वर के शरणापन्न् हो जाने का नाम "ईश्वर प्रणिधान" है।

वैश्विक स्तर पर बुराइयों और हिंसक प्रवृत्तियो ं मे ं निय ंत्रण

आज संपूर्ण विश्व को अनेक बुराइयों और हिंसक प्रवृतियों ने जकड़ रखा है। वर्त्तमान समय में हर किसी देश में आपस में एक दूसरे से किसी न किसी चीज़ में प्रतिस्पर्धा करने में होड. लगी हुई है। एक देश, दूसरे देश को शक्ति के क्षेत्र में पछाड़ने में लगा है या धार्मिक साम्राज्यवाद स्थापित करने की होड़ लगी हुई है। कई देश अपना शक्ति साम्राज्यवाद स्थापित कर रहे हैं और कई वैश्विक स्तर पर आतंकवाद। जिसका जीता जाता उदाहरण– वर्तमान समय में रशिया और यूक्रेन युद्ध तथा इजरायल और फिलिस्तीन (हमास) युद्ध भी एक है। जिसस ं मानवता की हानि हुई है। अगर सभी लोग योग के अंगो का अनुसरण करें विशेषकर यम में अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह और नियम में संतोष, तप, ईश्वर प्रणिधान का तो वैश्विक स्तर पर कभी भी इस तरह की कोई घटना ही नहीं हो सकती। योग के अंग यम–नियम अपने में एक सर्वोच्च स्तंभ का कार्य करते हैं। अगर योग क ं यम–नियमों को हर व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में अनुसरण करें तो जहाँ परिवार, समाज और राष्ट्रीय स्तर पर शांति स्थापित हो सकता है, वही ं वैश्विक स्तर पर भी शांति आ ैर उन्नति स्थापित होगी। जिसका अनुसरण कर हर व्यक्ति परमानन्द तथा सुखद जीवन की अनुभ ूति करेगा।

निश्कर्ष

अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मानव जीवन में योग क ं यम और नियम का हर प्रकार से महत्वपूर्ण स्थान है जहाँ अष्टांग योग के यम – नियम का स्वस्थ लाभ है, वही इससे समाज मे ं फैली अव्यवस्था और अस्थिरता को भी ठीक किया जा सकता ह ै और शांति स्थापित की जा सकती है। यह यम– नियम जीवन को सुखमय बनाने से लेकर, वैश्विक स्तर पर अशांति और हिंसा प्रवृतियों में रोक तथा राजयोग (मोक्ष) तक की प्राप्ति में सहायक है। अतः इसके लिए हम सभी को यम – नियम को अपने जीवन में उतारना होगा। यम – नियम योग का केवल एक अंग ही नही ं बल्कि यह सम्पूर्ण रूप से एक अनुशासित आ ैर नैतिक जीवन जीने की कला भी है। अष्टांग योग में योग के जितने महत्वपूण र् अंग आसन, प्राणायाम आदि है उतना ही महत्वपूर्ण अंग योग के यम और नियम भी हैं। इसीलिए महर्षि पतंजलि ने यम और नियम को राज योग साधना के प्रारंभिक और महत्वपूर्ण अंग माना है। जिसका पालन किए बिना राज योग की उच्च साधना (मोक्ष) की प्राप्ति असंभव है। अतः यह कहा जा सकता है कि यम – नियम के पालन से और इसका अपने जीवन में अनुसरण करने से शारीरिक, मानसिक, वैचारिक, सामाजिक, नैतिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक और आत्मिक स्तर की उच्च अवस्था को भी प्राप्त किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पातंजल योगदर्शन, गीताप्रेस, गोरखपुर।
2. योग दर्शन पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य।
3. पतंजलि योग दर्शन, डॉ. नवीन चंद्र भट्ट, किताब महल।
4. पतंजलि योग दर्शन हरिदास गोयेदक गा ेरखप्रेस।
5. योगसूत्र, व्यासभाष्य, भारतीय विद्या प्रकाशन।
6. विकास कुमार, चौखंबा पब्लिशि ंग हाऊस।
7. योग दर्शनम् आचार्य उदयवीर शास्त्री।?
8. ैचपतपजनंसपजल ीजंदहं ल्वहंरू अष्टांग योग ;इचसपअम.बवउद्ध